अधिकार 2
क्षायिक सम्यक्त्व

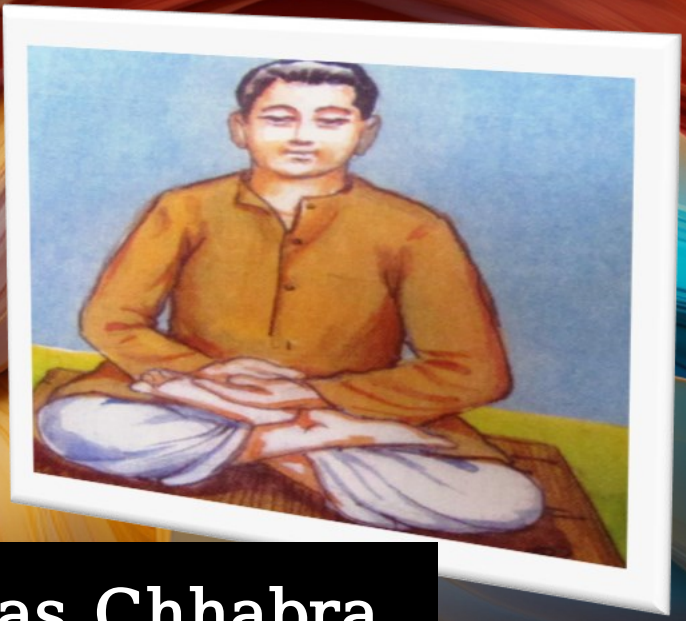

Presentation Developed By: Smt Sarika Vikas Chhabra

चरिमे फालिं दिण्णे, कदकरणिज्जो त्ति वेदगो होदि ।
सो वा मरणं पावइ, चउगइगमणं च तट्ठाणे ॥145॥
देवेसु देवमणुए, सुरणरतिरिए चउग्गईसुं पि ।
कदकरणिज्जुप्पत्ती, कमेण अंतोमुहुत्तेण ॥146॥

- अन्वयार्थ - (चरिमे फालिं दिण्णे) अन्तिम फालि का द्रव्य देने पर (कदकरणिज्जो त्ति वेदगो) कृतकृत्य वेदक सम्यग्दृष्टि (होदि) होता है । (सो) वह कृतकृत्य वेदक सम्यग्दृष्टि (तट्ठाणे) उस स्थान में (वा) विकल्प से (मरणं पावइ) मरण को प्राप्त होता है (च) और (चउगइगमणं) चारों गति में गमन कर सकता है।
- (कमेण) क्रम से (अंतोमुहुत्तेण) अन्तर्मुहूर्त के द्वारा (देवेसु) देवों में, (देवमणुए) देव और मनुष्यगति में (सुरणरतिरिए) देव, मनुष्य और तिर्यंचगति में (चउग्गईसुं पि) और चारों गतियों में (कदकरणिज्जुप्पत्ती) कृतकृत्य वेदक सम्यग्दृष्टि की उत्पत्ति होती है ॥145-146॥

www.JainKosh.org

कृतकृत्यवेदक काल

इस अंतिम फाली के पतन के साथ ही अनिवृत्तिकरण का काल समाप्त होता है । अब शेष रहा काल कृतकृत्यवेदक काल है ।

यह शेष रहा काल अपूर्वकरण के प्रथम समय में बनाई गलितावशेष गुणश्रेणी के शीर्षरूप काल का संख्यात बहुभाग प्रमाण है ।

शीर्ष का प्रमाण अनिवृत्तिकरण का संख्यातवाँ भाग था $\frac{2}{4}$ । इसका संख्यात बहुभाग $\frac{2}{4}\frac{3}{4}$ प्रमाण काल कृतकृत्यवेदक काल है ।

कृतकृत्य

कृतकृत्य अर्थात् (कृत्य) करने योग्य कार्य (कृत) किये जा चुके हैं – वह कृतकृत्य है ।

यहाँ दर्शनमोह की क्षपणा संबंधी जो स्थितिकांडक, गुणश्रेणी आदि कार्य थे, वे सब किये जा चुके हैं ।

अब शेष रहा द्रव्य एक-एक निषेक करके उदय में आकर खिरता है ।

और यह काल समाप्त होने के अनंतर जीव क्षायिक सम्यग्दृष्टि बन जाता है ।

www.JainKosh.org

कृतकृत्यवेदक काल में यदि आयु कर्म शेष है, तो वह जीव स्वस्थान में ही क्षायिक सम्यक्त्व को प्राप्त करता है ।

परंतु यदि कृतकृत्यवेदक काल में मरण हो, तो वह चारों गतियों में जाकर निष्ठापन कर सकता है ।

कृतकृत्यवेदक काल के चार भाग करो । प्रत्येक भाग में मरण की अपेक्षा संभव गतियाँ–

भाग	संभव गति
प्रथम	देव
द्वितीय	देव, मनुष्य
तृतीय	देव, मनुष्य, तिर्यंच
चतुर्थ	चारों गति

एक-एक भाग का प्रमाण = $\frac{\text{कृतकृत्यवेदक काल}}{४}$ = 2२ ३
४ ४ ४

कृतकृत्यवेदक काल में मरण

कृतकृत्यवेदक के प्रथम समय से प्रथम भाग प्रमाण काल में यदि मरण हो, तो वह नियम से देव गति में ही जाता है ।

अगले समय से द्वितीय भाग प्रमाण काल में मरण हो, तो देव गति या मनुष्य गति में जाता है ।

अगले समय से तृतीय भाग प्रमाण काल में मरण हो, तो देव, मनुष्य या तिर्यंच गति में जाता है ।

अगले समय से शेष चतुर्थ भाग प्रमाण काल में मरण हो, तो चारों गति में जाता है ।

ऐसा नियम क्यों है ?

क्योंकि उस-उस भाग में ही विवक्षित गति में उत्पन्न होने योग्य परिणाम होते हैं ।

शेष गतियों में उत्पन्न होने योग्य संक्लेश परिणाम नहीं पाये जाते हैं ।

प्रश्न – कृतकृत्यवेदक या क्षायिक सम्यग्दृष्टि मनुष्य; मनुष्य आदि गतियों में कैसे उत्पन्न हो सकता है ?
सम्यग्दृष्टि मनुष्य तो मात्र स्वर्ग में ही जाता है ।

उत्तर – जो मनुष्य सम्यक्त्व उत्पन्न होने पर आयु बांधता है, वह देव गति में ही जाता है – यह नियम है ।

परंतु सम्यक्त्व की प्राप्ति के पूर्व यदि चारों गतियों में से कोई आयु बांध ली है, तो सम्यक्त्व प्राप्त करने पर भी उसी गति में जन्म लेता है ।

इसलिये जिसने सम्यक्त्व के पूर्व आयु बांध ली है, वह कृतकृत्यवेदक या क्षायिक सम्यग्दृष्टि जीव विवक्षित गति में उत्पन्न होता है ।

सम्यक्त्व सहित नरक, तिर्यंच, मनुष्य में जन्म

यदि तिर्यंच या मनुष्य गति में उत्पन्न हुआ, तो नियम से भोगभूमि में ही उत्पन्न होता है।

सम्यक्त्व सहित भोगभूमि में जन्म कृतकृत्यवेदक या क्षायिक सम्यक्त्वी ही ले सकता है ।

औपशमिक या क्षायोपशमिक सम्यक्त्वी भोगभूमि में सम्यक्त्व सहित नहीं जन्मते हैं।

यदि नरक गति में उत्पन्न हुआ, तो नियम से प्रथम नरक में ही उत्पन्न होता है ।

नरक में सम्यक्त्व सहित जन्म कृतकृत्यवेदक या क्षायिक सम्यक्त्वी ही ले सकता है; अन्य सम्यक्त्वी नहीं ।

करणपढमादु जावय, किदकिच्चुवरिं मुहुत्तअंतो त्ति । ण सुहाण परावत्ती, सा धि कओदावरं तुवरिं ॥147॥

- अन्वयार्थ - (करणपढमादु जावय किदकिच्चुवरिं मुहुत्तअंतो त्ति) करणपरिणाम के प्रथम समय से लेकर कृतकृत्य वेदक के ऊपर अन्तर्मुहूर्त पर्यन्त (सुहाण) शुभ लेश्या का (परावत्ती) परावर्तन (ण) नहीं होता है।
- (तुवरिं) परन्तु उसके बाद (धि कओदावरं) कपोत के जघन्य अंश पर्यन्त (सा) लेश्या की परावृत्ति (परिवर्तन) होती है ॥147॥

www.JainKosh.org

लेश्या का परिवर्तन

दर्शन मोह क्षपक ने अध:प्रवृत्तकरण में 3 शुभ लेश्याओं में से जिस लेश्या से क्षपणा प्रारंभ की है, अनिवृत्तिकरण तक वही लेश्या वर्तती है ।

प्रतिसमय अनंत गुणी विशुद्धि होने से उसी लेश्या के अंशों में वृद्धि होते-होते उत्कृष्ट अंश तक लेश्या बढ़ती है ।

कृतकृत्यवेदक काल में यदि मरण नहीं करता है, तो इस काल में भी लेश्या का परिवर्तन नहीं होता है ।

कृतकृत्यवेदक काल में लेश्या का परिवर्तन

यदि कृतकृत्यवेदक काल में मरण होता है, तो

प्रथम भाग में लेश्या का परिवर्तन नहीं होता । चूंकि वैमानिक देवों में उत्पत्ति शुभ लेश्या के साथ होती है, तो लेश्या परिवर्तन की आवश्यकता भी नहीं है ।

शेष 3 भागों में यदि मरणकर देवगति में जन्म होता है, तो भी लेश्या परिवर्तन नहीं होता है ।

शेष 3 भागों में मरण करके यदि मनुष्य, तिर्यंच, नारकी में जन्म होना है, तो लेश्या क्रमशः परिवर्तित होकर कपोत लेश्या के जघन्य अंश में परिवर्तित होती है क्योंकि भोगभूमिज तिर्यंच, मनुष्य तथा नरक में अशुभ लेश्यापूर्वक ही जन्म होता है ।

शुभ लेश्या क्रमशः उत्कृष्ट से मध्यम, मध्यम से जघन्य अंश में परिवर्तित होकर कपोत लेश्या के जघन्य अंश में परिवर्तित होती है, जैसा कि लेश्या परिवर्तन के नियम हैं ।

कृतकृत्यवेदक काल में मरण होने पर

आगामी गति

देव

शेष 3 गति

लेश्या परिवर्तन

×

शुभ लेश्या से क्रमश: परिवर्तन होकर कपोत के जघन्य अंश में

एक अन्य व्याख्यान के अनुसार करण परिणामों के दौरान शुभ लेश्याओं में वृद्धि होते-होते क्रमश: पीत, पद्म, शुक्ल लेश्या में परिवर्तन होता है ।

अर्थात् प्रस्थापन किसी भी शुभ लेश्या में हुआ हो, परंतु अनिवृत्तिकरण की समाप्ति पर शुक्ल लेश्या ही होती है ।

शेष मरण संबंधी नियम समान हैं ।

अणुसमओवट्टणयं, कदकिज्जंतो त्ति पुव्वकिरियादो । वट्टदि उदीरणं वा, असंखसमयप्पबद्धाणं ॥148॥

- अन्वयार्थ - (पुव्वकिरियादो) पूर्व प्रयोग से (कदकिज्जंतो त्ति) कृतकृत्य वेदककाल के अंतपर्यन्त (अणुसमओवट्टणयं) प्रत्येक समय में अनुभाग का अपवर्तन (वट्टदि) होता है (वा) और
- (असंखसमयप्पबद्धाणं) असंख्यात समयप्रबद्धों की (उदीरणं वट्टदि) उदीरणा भी होती है ॥148॥

www.JainKosh.org

कृतकृत्यवेदक काल में होने वाले कार्य

1) जो प्रतिसमय सम्यक्त्व प्रकृति के अनंत बहुभाग अनुभाग की हानि वर्त रही थी, वह संपूर्ण कृतकृत्यकाल में भी वर्तती है । यद्यपि यहाँ प्रतिसमय अनंतगुणी विशुद्धि नहीं पायी जा रही है, तथापि करण परिणामों की विशेष विशुद्धि के संस्कार से अनुभाग का प्रतिसमय अपवर्तन यहाँ भी वर्तता है ।

2) कृतकृत्यवेदक काल के प्रथम समय से (एक आवली + 1) समय शेष रहने तक प्रत्येक समय असंख्यात समयप्रबद्धों की उदीरणा होती है । अंतिम आवली में उदीरणा नहीं होती क्योंकि जघन्य अतिस्थापना एवं निक्षेप का अभाव है ।

उदीरणा भी असंख्यात गुणित क्रम से होती है । अर्थात् प्रत्येक समय असंख्यात गुणा – असंख्यात गुणा द्रव्य उदीरणा में दिया जाता है ।

उदयबहिं ओक्कट्टिय, असंखगुणमुदयआवलिम्हि खिवे । उवरिं विसेसहीणं, किदकिज्जो जाव अइत्थवणं ॥149॥

- अन्वयार्थ - (उदयबहिं ओक्कट्टिय) उदयावली के बाहर के द्रव्य को अपकर्षित करके (उदयआवलिम्हि) उदयावली में (असंखगुणं) असंख्यात गुणितरूप से (खिवे) निक्षेपण करता है।
- (उवरिं) उसके ऊपर (किदकिज्जो) कृतकृत्य वेदक काल में (जाव अइत्थवणं) अतिस्थापनावली तक (विसेसहीणं) विशेषहीन क्रम से द्रव्य दिया जाता है ॥149॥

www.JainKosh.org

कृतकृत्यवेदक काल में अपकृष्ट द्रव्य

$$\text{अपकृष्ट द्रव्य} = \frac{\text{सर्व द्रव्य}}{\text{ओ}}$$

$$\frac{\text{अपकृष्ट द्रव्य}}{\text{प}_{\partial}}$$

$$\frac{\text{अपकृष्ट द्रव्य} \times \left(\text{प}_{\partial} - 1\right)}{\text{प}_{\partial}}$$

एकभाग, उदयावली हेतु

बहुभाग, उदयावली से उपरितन स्थिति हेतु

www.JainKosh.org

अपकृष्ट द्रव्य का विभाग

	उदयावली	शेष उपरितन स्थिति
कितना द्रव्य	एक भाग	बहुभाग
किस क्रम से	असंख्यात गुणित क्रम से	चयहीन क्रम से
किस विधि से	प्रक्षेप विधि से	मध्यमधन आदि विधि से

कृतकृत्यवेदक काल के प्रत्येक समय में इसी प्रकार से अपकृष्ट द्रव्य का बंटवारा एवं देने की विधि होती है।

www.JainKosh.org

कृतकृत्यवेदक होने पर दीयमान द्रव्य की रचना

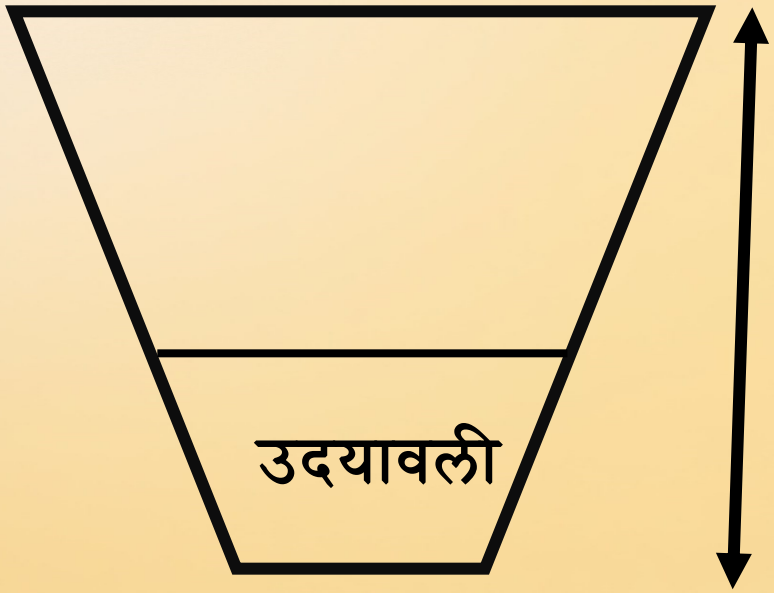

सम्यक्त्व प्रकृति – पूर्व सत्त्व

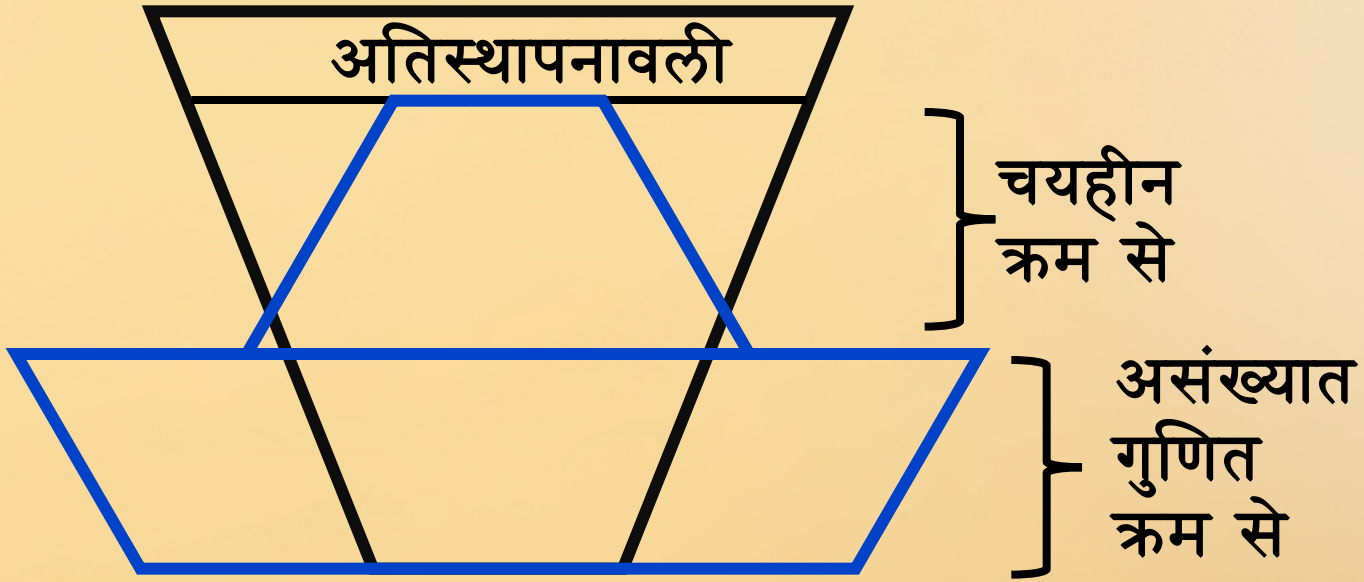

प्रथम समय – कृतकृत्यवेदक काल

www.JainKosh.org

जदि संकिलेसजुत्तो, विसुद्धिसहिदो अतो वि पडिसमयं । दव्वमसंखेज्जगुणं, ओक्कट्टदि णत्थि गुणसेढी ॥150॥

- अन्वयार्थ - कृतकृत्यवेदक सम्यग्दृष्टि (जदि संकिलेसजुत्तो) यदि संक्लेश युक्त हो (अतो) अथवा (विसुद्धिसहिदो) विशुद्धि युक्त हो (वि) तो भी (पडिसमयं) प्रत्येक समय में (असंखेज्जगुणं दव्वं) असंख्यातगुणे द्रव्य का (ओक्कट्टदि) अपकर्षण करता है। (गुणसेढी णत्थि) परन्तु गुणश्रेणि नहीं होती है ॥150॥

www.JainKosh.org

कृतकृत्य वेदक में अपकृष्ट द्रव्य का प्रमाण

कृतकृत्यवेदक सम्यग्दृष्टि संक्लेश युक्त हो या विशुद्धि सहित हो, तो भी प्रत्येक समय में असंख्यात गुणा अपकर्षण करता है ।

यहाँ विशुद्धि, संक्लेश परिणामों की अपेक्षा नहीं रखकर जो क्षय होने की अंतिम स्थिति बन गयी है, उसकी प्रक्रिया की अपेक्षा से ही असंख्यात गुणा द्रव्य का अपकर्षण होता रहता है ।

कृतकृत्यवेदक काल में गुणश्रेणी निक्षेपण नहीं है।

www.JainKosh.org

प्रश्न – उदयावली में असंख्यात गुणाकार रूप से द्रव्य दिया जा रहा है तो फिर गुणश्रेणी क्यों नहीं है?

उत्तर – अपकृष्ट द्रव्य का एक भाग उदयावली में एवं शेष बहुभाग उपरितन स्थिति में देना उदीरणा का लक्षण है । वह लक्षण यहाँ प्राप्त है ।

यदि उदयावली के ऊपर भी असंख्यात गुणा द्रव्य दिया जाता, तो गुणश्रेणी कह सकते थे । परंतु ऐसा यहाँ है नहीं ।

गुणश्रेणी का आयाम कम से कम अंतर्मुहूर्त होना चाहिए । एक आवली मात्र आयाम की गुणश्रेणी नहीं होती । इसलिये यहाँ गुणश्रेणी नहीं है ।

जदि वि असंखेज्जाणं, समयपबद्धाणुदीरणा तो वि ।
उदयगुणसेढिठिदिए, असंखभागो हु पडिसमयं ॥151॥

- अन्वयार्थ - (जदि वि) यद्यपि (असंखेज्जाणं समयपबद्धाणुदीरणा) असंख्यात समयप्रबद्धों की उदीरणा होती है (तो वि) तथापि (पडिसमयं) प्रत्येक समय में (उदयगुणसेढिठिदिए) उदयरूप गुणश्रेणि स्थिति के द्रव्य से (उदीरणा द्रव्य) (असंखभागो हु) असंख्यातवाँ भागमात्र है ॥151॥

www.JainKosh.org

सत्त्व और उदीरणा का अल्प-बहुत्व

इस प्रकार उदीरणा होते हुए, असंख्यातों बार असंख्यात गुणित द्रव्य देते हुए अंतिम उदीरणा के समय तक भी उदय निषेक को प्राप्त नवीन द्रव्य, पूर्व सत्त्व द्रव्य का असंख्यातवाँ भाग ही है ।

क्योंकि उदयनिषेक को प्राप्त द्रव्य $\frac{\text{सर्व द्रव्य}}{\sqrt{\text{प}}\ \partial}$ प्रमाण है । तथा उदीरणा द्वारा प्राप्त द्रव्य $\frac{\text{सर्व द्रव्य}}{\text{ओ}\times\frac{\text{प}}{\partial}}$ प्रमाण है ।

यहाँ उदीरणा द्रव्य, पूर्व द्रव्य से असंख्यातगुणा हीन है । अर्थात् उदीरणा द्रव्य पूर्व सत्त्व द्रव्य का असंख्यातवाँ भाग मात्र है ।

सम्यक्त्व प्रकृति की अंतिम उदीरणा

जब कृतकृत्यवेदक काल का (आवली + 1) समय शेष रहता है, तब सम्यक्त्व प्रकृति की अंतिम उदीरणा होती है ।

यहाँ उदयावली के ऊपर रखे अंतिम निषेक से द्रव्य का अपकर्षण करके जघन्य अतिस्थापना को छोड़कर जघन्य निक्षेप किया जाता है ।

अंतिम निषेक के नीचे $\frac{(\text{आवली}-1)\times 2}{3}$ प्रमाण जघन्य अतिस्थापना होती है, $\frac{(\text{आवली}-1)}{3}$ + 1 जघन्य निक्षेप होता है ।

$\frac{\text{अंतिम निषेक}}{\text{ओ}}$ = अपकृष्ट द्रव्य है ।

इस अपकृष्ट द्रव्य के दो विभाग करके जघन्य निक्षेप में दिये जाते हैं ।

अपकृष्ट द्रव्य

$\frac{\text{अपकृष्ट द्रव्य}}{\text{प}_{\partial}}$	$\frac{\text{अपकृष्ट द्रव्य} \times (\text{प}_{\partial} - 1)}{\text{प}_{\partial}}$
एकभाग	बहुभाग

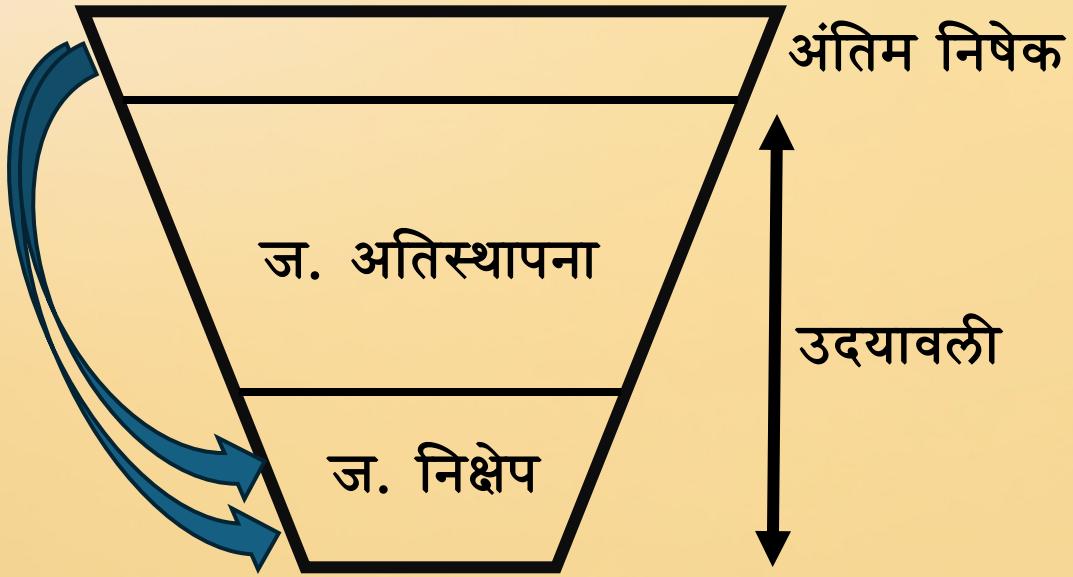

ये दोनों ही द्रव्य जघन्य निक्षेप में ही दिये जाने हैं परंतु एकभाग द्रव्य असंख्यात गुणा विधि से देना है और बहुभाग द्रव्य चयहीन क्रम से देना है।

यह सम्यक्त्व प्रकृति की उत्कृष्ट उदीरणा कहलाती है ।

www.Jain

क्षायिक सम्यक्त्व की प्राप्ति

इस अंतिम उदीरणा के पश्चात् एक उदयावली मात्र सम्यक्त्व प्रकृति का सत्त्व शेष रहा ।

यह प्रत्येक समय उदयमुख से नष्ट होता जा रहा है ।

अभी भी प्रत्येक समय अनुभाग का अपवर्तन जारी है ।

इस प्रकार एक-एक निषेक खिरता जाता है ।

अंतिम निषेक का उदय होने पर कृतकृत्यवेदक का काल समाप्त होता है ।

अगले समय में जीव क्षायिक सम्यग्दृष्टि हो जाता है ।

यहाँ दर्शन मोहनीय कर्म का निरवशेषरूप से अभाव हुआ ।

विदियकरणादिमादो, कदकरणिज्जस्स पढमसमओत्ति । वोच्छं रसखंडुक्कीरणकालादीणमप्पबहु ॥152॥

- अन्वयार्थ - (विदियकरणादिमादो) द्वितीय अपूर्वकरण के प्रारम्भ से (कदकरणिज्जस्स पढमसमओत्ति) कृतकृत्यवेदक के प्रथम समय तक (रसखंडुक्कीरण-कालादीणमप्पबहु) अनुभाग कांडकोत्कीरण कालादि का अल्पबहुत्व (वोच्छं) मैं कहता हूँ ॥152॥

www.JainKosh.org

दर्शन मोह क्षपक के
अपूर्वकरण के प्रथम समय से
कृतकृत्यवेदक के प्रथम समय तक होने
वाले अनुभाग कांडकोत्कीरण काल आदि
33 पदों का
अल्प-बहुत्व कहते हैं ।

रसठिदिखंडुक्कीरणअद्धा अवरं वरं च अवरवरं । सव्वत्थोवं अहियं, संखेज्जगुणं विसेसहियं ॥153॥

- अन्वयार्थ - (अवरं वरं अवरवरं च रसठिदिखंडुक्कीरणअद्धा) 1) जघन्य अनुभाग काण्डकोत्कीरण काल
- 2) उत्कृष्ट अनुभाग काण्डकोत्कीरण काल
- 3) जघन्य स्थितिकाण्डकोत्कीरण काल
- 4) उत्कृष्ट स्थितिकाण्डकोत्कीरण काल
- ये क्रमशः (सव्वत्थोवं अहियं संखेज्जगुणं विसेसहियं) सबसे कम, विशेष अधिक, संख्यातगुणा और विशेष अधिक हैं ॥153॥

www.JainKosh.org

33 पदों का अल्प-बहुत्व

1) अंतिम अनुभागकांडकोत्कीरण काल आगे कहे जाने वाले कालों में सबसे अल्प है ।

a. दर्शन मोहनीय का अंतिम अनुभागकांडक, सम्यक्त्व प्रकृति की स्थिति 8 वर्ष करने के अनंतर पूर्व होता है । उस अंतिम घात का उत्कीरण काल अल्प है।

b. शेष कर्मों का अंतिम अनुभागकांडकघात अनिवृत्तिकरण के अंतिम समय में समाप्त होता है । उसका उत्कीरण काल सबसे अल्प है ।

यह काल सबसे अल्प होने पर भी अंतर्मुहूर्त प्रमाण है । 2२

अल्प-बहुत्व

क्र	पद	स्थान	गुणकार	संदृष्टि
1	अंतिम अनुभागकांडकोत्कीरण काल		स्तोक	2२
2	प्रथम अनुभागकांडकोत्कीरण काल	अपूर्वकरण के प्रथम समय में	विशेष अधिक	2२ + 2२/४ = 2२।५ ४
3	अंतिम स्थितिकांडकोत्कीरण का काल क्योंकि एक स्थितिकांडक में हजारों अनुभागकांडक हो जाते हैं ।	अनिवृत्तिकरण के अंत में	संख्यात गुणा	2२।५ ४ ४
4	प्रथम स्थितिकांडकोत्कीरण का काल	अपूर्वकरण के प्रथम समय में	विशेष अधिक	2२।५ ४५ ४ ४

कदकरणसम्मखवणाणियट्टिअपुव्वद्ध संखगुणिदकमा । तत्तो गुणसेढिस्स य, णिक्खेओ साहियो होदि ॥154॥

- अन्वयार्थ- उसके पश्चात् (कदकरणसम्मखवणाणियट्टिअपुव्वद्ध) 5) कृतकृत्यवेदक काल
- 6) सम्यक्त्व प्रकृति का क्षपणाकाल (आठ वर्ष स्थिति शेष रहने के पश्चात् का काल)
- 7) अनिवृत्तिकरणकाल
- 8) अपूर्वकरण काल (संखगुणिदकमा) क्रम से संख्यातगुणित हैं ।
- (तत्तो) उससे (गुणसेढिस्स य णिक्खेओ) 9) गुणश्रेणि का निक्षेप (साहियो) कुछ अधिक (होदि) होता है ॥154॥

www.JainKosh.org

अल्प-बहुत्व

क्र	पद	गुणकार	संदृष्टि
5	कृतकृत्यवेदक का काल	संख्यात गुणा	2२ । ५ ४ ५ ४ = ४ ४ 2२२
6	सम्यक्त्व प्रकृति की स्थिति 8 वर्ष रहने के पश्चात् जितना काल सम्यक्त्व प्रकृति को क्षय करने में लगता है	संख्यात गुणा	2२२ । ४
7	अनिवृत्तिकरण का काल	संख्यात गुणा	2२२ । ४ ४
8	अपूर्वकरण का काल	संख्यात गुणा	2२२ । ४ ४ ४
9	अपूर्वकरण के प्रथम समय में प्रारंभ की गयी गुणश्रेणी का आयाम क्योंकि वह आयाम अपूर्वकरण + अनिवृत्तिकरण + $\frac{\text{अनिवृत्तिकरण}}{\text{संख्यात}}$ प्रमाण होता है।	कुछ अधिक	2२२ । ४ ४ ४+

सम्मदुचरिमे चरिमे, अडवस्सस्सादिमे च ठिदिखंडा । अवरवराबाहा वि य, अडवस्सं संखगुणियकमा ॥155॥

- अन्वयार्थ - उससे (सम्मदुचरिमे चरिमे अडवस्सस्सादिमे च ठिदिखंडा) 10) सम्यक्त्व प्रकृति के द्विचरम स्थितिकांडक,
- 11) चरम स्थितिकांडक
- 12) आठ वर्ष स्थिति शेष रहने पर प्रथम स्थितिकांडकायाम
- (अवरवराबाहा वि) 13) जघन्य आबाधा 14) उत्कृष्ट आबाधा
- (य) और (अडवस्सं) 15) आठ वर्ष स्थिति – (ये छह पद) (संखगुणियकमा) क्रम से संख्यातगुणे हैं ॥155॥

www.JainKosh.org

क्र	पद	गुणकार	संदृष्टि
10	सम्यक्त्व प्रकृति के द्विचरमकांडक का आयाम	संख्यात गुणा	2२२ | ४ ४ ४ ४+ = 2२
11	सम्यक्त्व प्रकृति के अंतिम कांडक का आयाम	संख्यात गुणा	2२ | ४
12	सम्यक्त्व प्रकृति के 8 वर्ष प्रमाण स्थिति करने पर प्रथम कांडक का आयाम	संख्यात गुणा	2२ | ४ ४
13	कृतकृत्यवेदक के प्रथम समय में ज्ञानावरणादि 7 कर्मों के बंध की आबाधा	संख्यात गुणी	2२ | ४ ४ ४
14	अपूर्वकरण के प्रथम समय में ज्ञानावरणादि 7 कर्मों के बंध की आबाधा क्योंकि अंत के स्थिति बंध से प्रारंभ का स्थितिबंध संख्यात गुणा है, तो तदनुसार आबाधा के भी संख्यात गुणे होने में विरोध नहीं है ।	संख्यात गुणी	2२ | ४ ४ ४ ४
यहाँ तक कहे गये सारे आयाम अंतर्मुहूर्त मात्र हैं । इसके आगे के पदों में काल; वर्ष आदि में रहेगा ।			
15	सम्यक्त्व प्रकृति की 8 वर्ष प्रमाण स्थिति	संख्यात गुणा	व ८

सम्मे असंखवस्सिय, चरिमट्ठिदिखंडओ असंखगुणो । मिस्से चरिमं खंडयमहियं अडवस्समेत्तेण ॥156॥

- अन्वयार्थ - उससे (सम्मे असंखवस्सिय चरिमट्ठिदिखंडओ) 16) सम्यक्त्व प्रकृति का असंख्यात वर्षप्रमाण अंतिम स्थितिकांडक (असंखगुणो) असंख्यातगुणा है।
- उससे (मिस्से चरिमं खंडयं) 17) मिश्र प्रकृति का अंतिम स्थितिकांडक (अडवस्समेत्तेण अहियं) आठ वर्षमात्र से अधिक है ॥156 ॥

www.JainKosh.org

अल्प-बहुत्व

क्र	पद	गुणकार	संदृष्टि
16	8 वर्ष प्रमाण स्थिति करने के लिये जो सम्यक्त्व प्रकृति का असंख्यात वर्ष प्रमाण अंतिम स्थितिकांडक किया था, उसके कांडक का आयाम	असंख्यात गुणा	प $\partial\partial\partial$ − व ८
17	मिश्र प्रकृति का अंतिम स्थितिकांडक क्योंकि मिश्र प्रकृति का तो पूरा सत्त्व कांडक में ग्रहण किया है परंतु सम्यक्त्व प्रकृति का 8 वर्ष छोड़कर शेष सर्व सत्त्व कांडक में ग्रहण किया है ।	8 वर्ष अधिक	प $\partial\partial\partial$

मिच्छे खविदे सम्मदुगाणं ताणं च मिच्छसत्तं हि । पढमंतिमठिदिखंडा, असंखगुणिदा हु दुट्ठाणे ॥157॥

- अन्वयार्थ- उससे (मिच्छे खविदे सम्मदुगाणं पढमठिदिखंडा) 18) मिथ्यात्व का क्षय होने पर सम्यक्त्व और मिश्र प्रकृति का प्रथम स्थितिकांडक (च) और
- (मिच्छसत्तं हि ताणं अंतिमठिदिखंडा) 19) मिथ्यात्व का सत्त्व रहते हुए उन दोनों का (सम्यक्त्व और मिश्र प्रकृति का) अंतिम स्थितिकांडक (हु दुट्ठाणे असंखगुणिदा) – ये दो स्थान असंख्यातगुणे हैं ॥157॥

www.JainKosh.org

अल्प-बहुत्व

क	पद	गुणकार	संदृष्टि
18	मिथ्यात्व का क्षय कर देने के पश्चात् मिश्र और सम्यक्त्व प्रकृति का प्रथम स्थितिकांडक का आयाम क्योंकि यहाँ स्थिति-सत्त्व बहुत है, जो असंख्यात बहुभाग रूप कांडक द्वारा घाता जा रहा है ।	असंख्यात गुणा	प × $(\partial - 1)$ ∂ ∂ ∂
19	सम्यक्त्व व मिश्र प्रकृति का इसके पूर्व का स्थितिकांडक का आयाम क्योंकि वहाँ जो असंख्यात गुणा सत्त्व है, उसका असंख्यात बहुभाग घात के लिये ग्रहण किया है ।	असंख्यात गुणा	प × $(\partial - 1)$ ∂ ∂

मिच्छंतिमठिदिखंडो, पल्लासंखेज्जभागमेत्तेण । हेट्ठिमठिदिप्पमाणेणब्भहियो होदि णियमेण ॥158॥

- अन्वयार्थ- उससे (मिच्छंतिमठिदिखंडो) 20) मिथ्यात्व का अंतिम स्थितिकाण्डकायाम (पल्लासंखेज्जभागमेत्तेण हेट्ठिमठिदिप्पमाणेण) पल्य के असंख्यातवें भागमात्र नीचे की स्थिति प्रमाण से (णियमेण) नियम से (अब्भहियो) अधिक (होदि) होता है ॥158॥

www.JainKosh.org

अल्प-बहुत्व

क्र	पद	गुणकार	संदृष्टि
20	मिथ्यात्व का अंतिम स्थितिकांडक का आयाम क्योंकि मिथ्यात्व के अंतिम कांडक में मिथ्यात्व की सारी स्थिति घातने के लिये ग्रहण कर ली है । परंतु मिश्र और सम्यक्त्व की $\frac{\text{पल्य}}{\text{असंख्यात}}$ भाग प्रमाण स्थिति को छोड़कर शेष असंख्यात बहुभाग स्थिति घात के लिये ग्रहण की है । इसलिये मिथ्यात्व का अंतिम कांडक, शेष 2 प्रकृतियों के अंतिम कांडक से $\frac{\text{पल्य}}{\text{असंख्यात}}$ भाग प्रमाण अधिक है ।	विशेषाधिक	प ∂

दूरावकिट्टिपढमं, ठिदिखंडमसंखसंगुणं तिण्णं ।
दूरावकिट्टिहेदू, ठिदिखंडं संखसंगुणियं ॥159॥

- अन्वयार्थ- उससे (दूरावकिट्टिपढमं तिण्णं ठिदिखंडमसंखसंगुणं) 21) दूरापकृष्टि संज्ञक स्थिति शेष रहने के पश्चात् प्रवृत्त होने वाला मिथ्यात्व, मिश्र और सम्यक्त्व प्रकृति का प्रथम स्थितिकांडक असंख्यातगुणा है।
- उससे (दूरावकिट्टिहेदू ठिदिखंडं) 22) दूरापकृष्टि स्थिति शेष रहने के लिए कारणभूत स्थितिकांडक (संखसंगुणियं) संख्यातगुणा है ॥159॥

www.JainKosh.org

अल्प-बहुत्व

क्र	पद	गुणकार	संदृष्टि
21	दर्शनमोह की तीनों प्रकृतियों की जब दूरापकृष्टि प्रमाण सत्ता शेष रहती है, तब जो होने वाले प्रथम स्थितिकांडक का आयाम क्योंकि वहाँ सत्त्व अधिक होने से कांडक का आयाम असंख्यात गुणा हो जाता है ।	असंख्यात गुणा	प | $(\partial-1)$ ५ ५ ५ ५ | ∂
22	इसके पूर्व का कांडक का आयाम यह कांडक; सत्त्व को दूरापकृष्टि प्रमाण बनाने के लिये किया है ।	संख्यात गुणा	प ४ ५ ५ ५ ५

पलिदोवमसत्तादो, विदियो पल्लस्स हेदुगो जो दु ।
अवरो अपुव्वपढमे, ठिदिखंडो संखगुणिदकमा ॥160॥

- अन्वयार्थ- उससे (पलिदोवमसत्तादो विदियो ठिदिखंडो) 23) पल्योपमप्रमाण सत्त्व शेष रहने के अनन्तर होने वाला दूसरा स्थितिकांडक,
- उसके बाद (पल्लस्स हेदुगो जो दु) 24) पल्योपम स्थिति शेष रहने में कारणभूत स्थितिकांडक
- (अपुव्वपढमे अवरो ठिदिखंडो) 25) अपूर्वकरण के प्रथम समय में होने वाला जघन्य स्थितिकांडक – ये तीन पद (संखगुणिदकमा) क्रम से संख्यातगुणे हैं ॥160॥

www.JainKosh.org

अल्प-बहुत्व

क्र	पद	गुणकार	संदृष्टि
23	पल्य प्रमाण स्थिति-सत्त्व शेष रहने पर, जो द्वितीय स्थितिकांडक किया जाता है, उसका आयाम	संख्यात गुणा	प ४ ५ ५
24	पल्यप्रमाण स्थिति करने के लिए जो अंतिम स्थितिकांडक किया जाता है, उसका आयाम	संख्यात गुणा	प २ २
25	अपूर्वकरण के प्रथम समय में होने वाले जघन्य स्थितिकांडक का आयाम	संख्यात गुणा	प २

पलिदोवमसत्तादो, पढमो ठिदिखंडओ दु संखगुणो ।
पलिदोवमठिदिसत्तं, होदि विसेसाहियं तत्तो ॥161॥

- अन्वयार्थ - उससे (पलिदोवमसत्तादो पढमो ठिदिखंडओ दु) 26) पल्योपम स्थितिसत्त्व रहने पर प्रवृत्त होने वाला प्रथम स्थितिकांडक (संखगुणो) संख्यातगुणा है ।
- (तत्तो) उससे (पलिदोवमठिदिसत्तं) 27) पल्योपम स्थितिसत्त्व (विसेसाहियं) विशेष अधिक (होदि) है ॥161॥

www.JainKosh.org

अल्प-बहुत्व

क	पद	गुणकार	संदृष्टि
26	पल्य प्रमाण सत्त्व रहने पर होने वाले प्रथम स्थितिकांडक का आयाम क्योंकि यह पल्य का संख्यात बहुभाग प्रमाण आयाम है ।	संख्यात गुणा	प ४ ५
27	पल्य प्रमाण स्थिति क्योंकि एक भाग मात्र स्थिति अधिक करने पर पल्य की प्राप्ति हो जाती है ।	विशेष अधिक	प

विदियकरणस्स पढमे, ठिदिखंडविसेसयं तु तदियस्स । करणस्स पढमसमये, दंसणमोहस्स ठिदिसत्तं ॥162॥

- अन्वयार्थ - उससे (विदियकरणस्स पढमे ठिदिखंडविसेसयं तु) 28) अपूर्वकरण के प्रथम समय में स्थितिखंडविशेष (उत्कृष्ट और जघन्य स्थितिकाण्डक का अन्तर संख्यात गुणा है।)
- 29) उससे (तदियस्स करणस्स) तृतीय अनिवृत्तिकरण के (पढमसमये) प्रथम समय में (दंसणमोहस्स ठिदिसत्तं) दर्शनमोहनीय का स्थिति-सत्त्व संख्यातगुणा है। (यह आगे की 163 गाथा से अर्थ लगाना चाहिए ।) ॥162॥

www.JainKosh.org

क	पद	गुणकार	संदृष्टि
28	अपूर्वकरण के प्रथम समय में (उत्कृष्ट कांडक आयाम – जघन्य कांडक आयाम) का प्रमाण क्योंकि उत्कृष्ट कांडक का आयाम सागर पृथक्त्व प्रमाण है, जघन्य कांडक का आयाम $\frac{\text{पल्य}}{\text{संख्यात}}$ प्रमाण है। अत: यह विशेष का प्रमाण पल्य प्रमाण से संख्यात गुणा होता ही है।	संख्यात गुणा	सा ७ / ८ – प / २
29	अनिवृत्तिकरण के प्रथम समय में दर्शनमोह का स्थिति-सत्त्व क्योंकि वह सागर लक्ष पृथक्त्व प्रमाण है ।	संख्यात गुणा	सा ७ ल / ८

दंसणमोहूणाणं, बंधो सत्तो य अवर वरगो य ।
संखेण य गुणियकमा, तेत्तीसा एत्थ पदसंखा ॥163॥

- अन्वयार्थ - उससे (दंसणमोहूणाणं) दर्शनमोहनीय बिना अन्य कर्मों का (अवर वरगो य बंधो सत्तो य) जघन्य स्थितिबंध, उत्कृष्ट स्थितिबंध, जघन्य स्थितिसत्त्व और उत्कृष्ट स्थितिसत्त्व (संखेण य गुणियकमा) क्रम से संख्यातगुणे हैं।
- (एत्थ) इस प्रकार यहाँ (तेत्तीसा पदसंखा) तैंतीस अल्पबहुत्व पद हैं ॥163॥

www.JainKosh.org

क्र	पद	गुणकार	संदृष्टि
30	दर्शन मोह को छोड़कर ज्ञानावरणादि शेष कर्मों का जघन्य स्थितिबंध यह कृतकृत्यवेदक काल के प्रथम समय में होता है ।	संख्यात गुणा	सा अं को 2 ४ ४ ४
31	इन्हीं कर्मों का उत्कृष्ट स्थितिबंध यह अपूर्वकरण के प्रथम समय में पाया जाता है ।	संख्यात गुणा	सा अं को 2 ४ ४
32	इन्हीं कर्मों का जघन्य स्थिति-सत्त्व यह अनिवृत्तिकरण के चरम समय में पाया जाता है ।	संख्यात गुणा	सा अं को 2 ४
33	इन्हीं कर्मों का उत्कृष्ट स्थिति-सत्त्व यह अपूर्वकरण के प्रथम समय में पाया जाता है ।	संख्यात गुणा	सा अं को 2

सत्तण्हं पयडीणं, खयादु खइयं तु होदि सम्मत्तं ।
मेरु व णिप्पक्कंपं, सुणिम्मलं अक्खयमणंतं ॥164॥

- अन्वयार्थ - (सत्तण्हं पयडीणं खयादु) अनन्तानुबन्धी चार कषाय और दर्शन-मोहनीय की तीन प्रकृतियाँ – ऐसी सात प्रकृतियों के क्षय से (मेरु व णिप्पक्कंपं) मेरु समान निष्प्रकंप, (सुणिम्मलं) अतिशय निर्मल, (अक्खयं अणंतं) अविनाशी अनन्त – ऐसा (खइयं तु सम्मत्तं) क्षायिक सम्यक्त्व (होदि) होता है ॥164॥

www.JainKosh.org

क्षायिक सम्यक्त्व

दर्शन मोह की 3 एवं

अनंतानुबंधी की 4 प्रकृतियों के

क्षय से तत्त्वार्थ श्रद्धानरूप परिणामों को

क्षायिक सम्यक्त्व कहते हैं ।

www.JainKosh.org

यह क्षायिक सम्यक्त्व कैसा है ?

मेरु के समान निष्कंप	अर्थात् निश्चल है,
सुनिर्मल	अर्थात् अतिशयता से शंका आदि मलों से रहित है,
अक्षय	अर्थात् गाढ़। शक्तिहीन न होने से शिथिलाचार का अभाव है ।
अनंत	अर्थात् अन्तरहित है । सादि-अनंत काल पर्यंत रहता है ।

www.JainKosh.org

दंसणमोहे खविदे, सिज्झदि तत्थेव तदियतुरियभवे ।
णादिक्कदि तुरियभवं, ण विणस्सदि सेससम्मेव ॥165॥

- अन्वयार्थ - (दंसणमोहे खविदे) दर्शनमोह का क्षय होने पर (तत्थेव) उस ही भव में या (तदियतुरियभवे) तीसरे अथवा चौथे भव में (सिज्झदि) सिद्ध होता है ।
- (तुरियभवं) चौथे भव का (णादिक्कदि) उल्लंघन नहीं करता ।
- (सेससम्मेव) शेष सम्यक्त्व के समान (औपशमिक और क्षायोपशमिक सम्यक्त्व के समान) (ण विणस्सदि) नष्ट नहीं होता है ॥165॥

www.JainKosh.org

क्षायिक सम्यक्त्व होने पर मुक्ति कब होती है?

उसी भव में

तीसरे भव में

मनुष्य → देव → मनुष्य

मनुष्य → नारकी → मनुष्य

चतुर्थ भव में

मनुष्य → भोगभूमि मनुष्य → सौधर्म-2 देव → मनुष्य

नियम से मुक्ति प्राप्त करता है ।

www.JainKosh.org

क्षायिक सम्यक्त्वी के भव

दर्शन मोह का क्षय होने पर उसी भव में, तीसरे भव में अथवा चौथे भव में मुक्ति प्राप्त करता है ।

चरम शरीरी जीव उसी भव में क्षपक श्रेणी आरोहण करके मोक्ष प्राप्त करते हैं ।

कोई क्षायिक सम्यक्त्वी देवायु का बंध करके वर्तमान भव, अगला देव भव, तीसरा वहाँ से च्युत होकर मनुष्य भव प्राप्त कर मुक्ति प्राप्त करते हैं ।

किसी मनुष्य ने सम्यक्त्व प्राप्ति के पूर्व यदि नरकायु का बंध किया है, पश्चात् क्रमपूर्वक क्षायिक सम्यक्त्व की प्राप्ति की है, तो वह वर्तमान भव, अगला नरक भव, वहाँ से मनुष्य भव प्राप्त कर – इस प्रकार तीन भवों में मुक्ति प्राप्त करता है ।

www.jainkosh.org

क्षायिक सम्यक्त्वी के भव

किसी मनुष्य ने सम्यक्त्व प्राप्ति के पूर्व मनुष्यायु या तिर्यंचायु का बंध किया है, पश्चात् क्रमपूर्वक क्षायिक सम्यक्त्व प्राप्त किया है, तो वह

1. वर्तमान भव,
2. अगला भोगभूमिज मनुष्य या तिर्यंच का भव,
3. वहाँ से सौधर्म-ऐशान स्वर्ग का भव,
4. वहाँ से च्युत होकर मनुष्य भव प्राप्त कर –

इस प्रकार चार भवों में मुक्ति प्राप्त करता है ।

इसके अलावा क्षायिक सम्यक्त्वी संसार में नहीं भ्रमता है ।

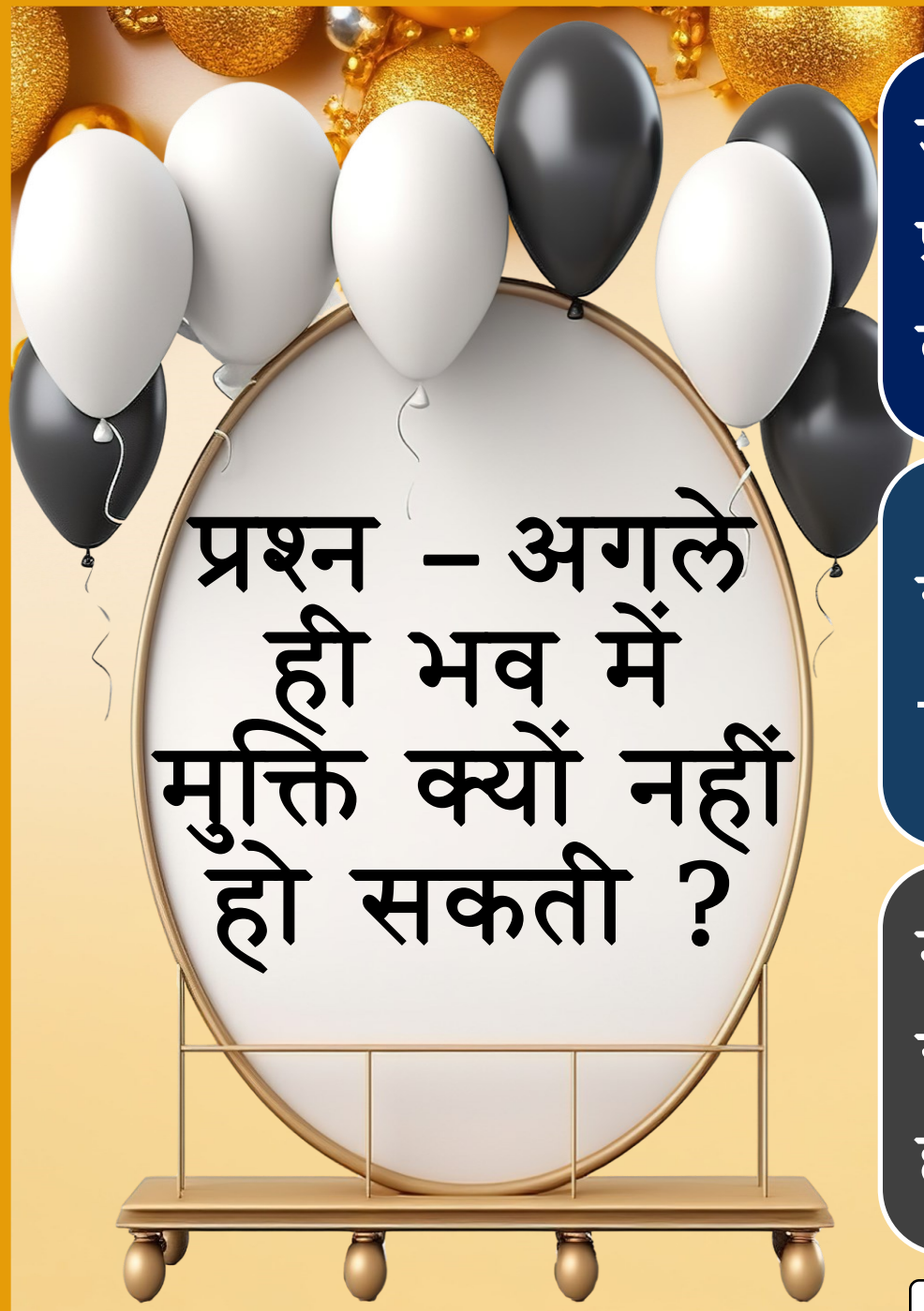

प्रश्न – अगले ही भव में मुक्ति क्यों नहीं हो सकती ?

उत्तर – वर्तमान भव मनुष्य का है । यहाँ यदि मुक्ति नहीं प्राप्त की, तो सम्यग्दृष्टि मनुष्य देवगति ही जाता है तब तीन भव होते ही हैं ।

सम्यक्त्व के बिना आयुबंध होने पर 3 या 4 भव होते हैं – इसलिये 2 भव में मुक्ति नहीं होती ।

मनुष्य से सीधा कर्मभूमि का मनुष्य; मिथ्यादृष्टि ही बन सकता है, सम्यग्दृष्टि नहीं । इसलिये दो भव में मुक्ति नहीं होती है ।

सत्तण्हं पयडीणं, खयादु अवरं तु खइयलद्धी दु ।
उक्कस्सखइयलद्धी, घाइचउक्कक्खएण हवे ॥166॥

- अन्वयार्थ - (सत्तण्हं पयडीणं खयादु) सात प्रकृतियों के क्षय से (अवरं तु खइयलद्धी दु) जघन्य क्षायिक लब्धि प्राप्त होती है ।
- (घाइचउक्कक्खएण) चार घातिया कर्मों के क्षय से (उक्कस्सखइयलद्धी) उत्कृष्ट क्षायिक लब्धि (हवे) होती है ॥166॥

www.JainKosh.org

क्षायिक लब्धि

	जघन्य क्षायिक लब्धि	उत्कृष्ट क्षायिक लब्धि
किस कर्म के क्षय से	7 प्रकृतियों के क्षय से	4 घाति कर्मों के क्षय से
स्वामी	असंयत सम्यग्दृष्टि	परमात्मा

www.JainKosh.org

उवणेउ मंगलं वो, भवियजणा जिणवरस्स कमकमलजुयं ।
जसकुलिसकलससत्थिय-ससंकसंखकुसादिलक्खणभरियं ॥167॥

- अन्वयार्थ - (भवियजणा) हे भव्य जीवों! (जस-कुलिस-कलस-सत्थिय-ससंक-संख-कुसादि-लक्खणभरियं) मत्स्य, वज्र, कलश, स्वस्तिक, चंद्रमा, शंख, अंकुश आदि लक्षणों से परिपूर्ण (जिणवरस्स कमकमलजुयं) जिनेन्द्र भगवान के चरणकमल युगल (वो) तुम्हें (मंगलं) मंगलता (उवणेउ) प्रदान करें ॥167॥

www.JainKosh.org

ॐ

- Reference : श्री लब्धिसार टीकासहित अनुवाद – ब्र. सुजाता रोटे, बाहुबली (वर्तमान में आर्यिका श्री शुद्धोहंश्री माताजी)

- For updates / feedback / suggestions, please contact
  - Sarika Jain, sarikam.j@gmail.com
  - www.jainkosh.org
  - ☎: 94066-82889
- इसी विषय के विडियो लेक्चर हमारे चैनल पर उपलब्ध हैं । आप अवश्य लाभ लें । www.Jainkosh.org/wiki/Videos पेज पर जाएँ एवं लब्धिसार की प्लेलिस्ट चुनें ।